Scanned with OKEN Scanner

26

रोहित कुमार
रांगेय राघव के नाटक रामानुज तथा स्वर्गभूमि का यात्री का अध्ययन 77
डॉ. अमोल दंडवते
आदर्श और यथार्थ के बीच का द्वन्द्व : 'एक और द्रोणाचार्य' 82
डॉ. हेना
परम्परा और आधुनिकता का समन्वय : बाणभट्ट की आत्मकथा 88
डॉ. मौसमी मालाकार
हरिशंकर परसाई के साहित्य में नारी-जीवन 93
डॉ. आशा शैली
आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के सामाजिक एवं सांस्कृतिक निबंध 101
महेश वर्मा
श्रीलाल शुक्ल का अज्ञातवास और मानवीय संवेदना 108
डॉ. भूपेंद्र सर्वेराव निकालजे
इक्कीसवीं सदी के उपन्यासों में अभिव्यक्त सामाजिक समस्याएँ 114
पूनम मानकर
सूर्यबाला की कहानियों में मानवेत्तर संवेदनाओं के विविध आयाम 119
रचना कुशवाह
मॉरिशस का प्रवासी साहित्य : एक अनुशीलन 124
शैलेंद्र गि. दुबे
हिंदी पत्रकारिता की मानक भाषा और शब्दों का निर्माण व चयन 128
मोनिका घुल्ला
21वीं सदी के पंजाब के हिंदी उपन्यासों में पंजाबी संस्कृति 135
डॉ. श्यामदेव मिश्र
सूफ़ी प्रेमाख्यानों के कथा-शिल्प का प्रभाव 142
कैलाश नारायण मीणा
समकालीन काव्य और भूमंडलीकरण के दबाव 148
डॉ. श्रीकेश पाण्डेय
केदारनाथ सिंह के काव्य में संवेदना 151
डॉ. रेखा शर्मा
छायावाद की पृष्ठभूमि में भगवतीचरण वर्मा के काव्य में समाज का गहन अध्ययन 154

Scanned with OKEN Scanner

20

इक्कीसवीं सदी के उपन्यासों में अभिव्यक्त सामाजिक समस्याएँ

डॉ. भूपेंद्र सर्वेराव निकालजे

इक्कीसवीं सदी का आगमन कई मायनों में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण रहा है। मानव जीवन के विविध पक्ष उसकी सोच और जीवन शैली पर प्रभाव स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। साहित्य का युगबोध से गहरा संबंध है और मानव अनुभूति युग से प्रभावित होती है, साहित्य उसी मानवीय अनुभूति की अभिव्यक्ति है। हर युग का साहित्यकार युग के साथ अपनी अनुभूति को प्रतिभा द्वारा सौंदर्य प्रदत्त करता है। 21वीं शताब्दी के पृथक् दशक का परिदृश्य देखे तो समाज में विभिन्न कार्य व्यापार घटित होते हैं, उसका परिणाम मनुष्य के जीवन जगत पर होता हुआ दिखाई देता है, कुछ प्रसंगों तथा घटनाओं का प्रभाव भावुक संवेदनशील सहृदय साहित्यकार के दिलो-दिमाग पर होता है। ऐसा भावुक संवेदनशील, सहृदय साहित्यकार जब साहित्य सृजन करता है तब साहित्य में युगीन परिस्थितियों का अंकन होता है। विश्व की एकाद घटना जगत को प्रभावित करती है जैसे रूस के टूटने तथा साम्यवादी विचारधारा की क्षीण होते ही पूंजीवाद वैश्वीकरण निजीकरण के नये लेवल के साथ तीसरी दुनिया पर हावी होने लगी है। अपनी सांस्कृतिक परंपरा और जनतांत्रिक व्यवस्था के बावजूद हम आज पूंजीवादी देश की दृष्टि से मात्र ग्राहक बन गये हैं। वैश्वीकरण के मोहक लेवल की तरह नवपूँजीवाद का यह विस्तार है। भारत के लिए वैश्वीकरण मूलतः एक आर्थिक आक्रमण तो हैं ही साथ में एक सामाजिक-सांस्कृतिक आक्रमण भी रहा है।

वर्तमान युग की पीढ़ी साहित्य और संस्कृति के बीच पलकर जवान नहीं हुई, बल्कि इंटरनेट, ई-मेल और सर्फिंग के समय की सरगम है और इस सरगम में रिश्ते-नातों कोई संवेदनात्मक स्वर नहीं है। मूल्य विघटन, मूल्य, शून्यता, मूल्य विहीनता, आत्मकेंद्री स्वार्थी भावना, इनके हृदय में विराज रही है। राजनीतिक विडम्बनाओं, आर्थिक विसंगतियों और सामाजिक विषमताओं के रूप में दृष्टिगोचर होती है। व्यक्ति के आत्मिक स्तर पर उठा भय, संत्रास, अलगाव, संशय, आध्यात्मिक बोधपन आया है। यह एक नये युग की पहचान बन गई है, परिस्थितियों के अनुरूप समाज एक दिशा की ओर गमन करता है, युगीन परिस्थितियों के परिणाम समाज तथा साहित्य पर होते रहते हैं; ये परिस्थितियां ही साहित्य में उभरकर आती हैं जिनके बीच साहित्य सृष्टा लेखक स्वयं रहता है। समाज की वास्तविक परिस्थिति को दुनिया के सामने लाने का कार्य साहित्यकार अपनी लेखनी से करता है। समाज के उपेक्षित लोगों का जीवन उनकी यातनाएं दलितों के साथ का व्यवहार का चित्रण साहित्य में होता है। नवजागरण की इस अवधारणा में दलित चेतना पर कई महत्त्वपूर्ण उपन्यासों का सृजन हुआ है। परंपरागत वर्ण व्यवस्था में शूद्र और पंचम वर्ण के अंतर्गत आने वाले समुदाय को अछूत माना जाता है, उसे 'दलित' कहा जाता है। इसमें आदिवासी, भूमिहीन, खेत, मजदूर, श्रमिक, यायावरी जातिवाद सभी के सभी दलित शब्द से व्याख्यायित है। दलित साहित्य का केंद्र विन्दु मनुष्य है। वह मनुष्य के दुःख, दर्द, उसके संघर्ष और जिजीविषा तथा उसकी मुक्ति और उत्कर्ष को कसौटी मानता है। निषेध, नकार और विद्रोह इसके मूल में हैं। स्वाभाविक है कि उसमें मानव जीवन तथा मानव समाज क समस्याएं अन्तर्निहित है। इक्कीसवीं सदी का परिवेश आधुनिक तो हैं लेकिन परंपराओं को छोड़ने को तैयार नहीं है। उसी को मद्दे नज़र रखते हुए इस काल में समाज में जागृति निर्माण करने का कार्य करता है। इस सदी के उपन्यासों में आने वाले पात्र निरंतर किसी न किसी समस्या से जूझते हमारे सामने आते हैं। यह समस्या उसकी केवल अकेले की नहीं होती बल्कि वह जिस समाज का प्रतेनिधित्व करता है उस समाज की होती है।

इक्कीसवीं सदी के उपन्यास में विद्यासागर नौटियाल का स्वं द् द् दास ! पाणि पाणि, उमराव सिंह जाटव का थनेगा नहीं विद्रोह, रूपनारायण सोनकर का नूअरदान, मोहनदास नैमिशराय का आज बाजार बंद है। इन उपन्यासों में अभिव्यक्त सामाजिक समस्याओं को उपन्यासकारों ने दर्शाया है।

जाति भेद की समस्या

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, समाज में रहकर वह अपना जीवन जीता है। समाज के भीतर उपेक्षित दलित जातियों पर कई प्रकार के सामाजिक बंधन थोपे गए हैं भारतीय समाज व्यवस्था में धर्म के साथ जाति का महत्त्व रहा है। डॉ. ज्योत्स्ना शर्मा के मतानुसार- "लोग जाति-पाति का ध्यान अभी तक इतना रखते हैं कि गरीब से गरीब व्यक्ति भी इसके पालन में अपने आप पर गर्व करता है।"[1] यह कथन दलितों के बारे में यथार्थ लगता है दलित अपनी जाति व्यवस्था का पालन करते हैं, तो दूसरी ओर सवर्ण लोग जाति के आधार पर दलितों को अछूत उपेक्षित मानते हैं।

'स्वर्ग द् द् दा। पाणि पाणि' उपन्यास में सितानू पानी के लिए पानी की धार पर आता है लेकिन सितानु दलित जाति का होने के कारण उच्च वर्ग की महिलाएं सितानू से दूर रहती है, ताकि उसके छूने से वह पानी अपवित्र हो जाएगा। 'सितनू हरिजन था। बहू राजपूत वह उसके भाँडे को उठाकर पानी की गिरती धारा के नीचे नहीं रख

खाल उतारने का काम जब पूरा हो जाता तब मरे पशु के शरीर से अच्छे मांस का टुकड़ा काटकर घर ले जाते थे और उस दिन घर में भर पेट गोश्त की दावत उड़ाई जाती थी।"[8] समूचे विश्व में आज गरीबी, जातिवाद भेदभाव तथा अछूत होने की पीड़ा का अभिशाप जारी है। इस बदलती हुई तकनीक की सदी में ग्लोबल विश्व में आम आदमी अभी भी गुलामी से उभरा नहीं है। निजीकरण के कारण सार्वजनिक उद्योगों में भी मजदूरों का भविष्य खतरे में है।

मोहनदास नैमिशराय का उपन्यास आज बाजार बंद है इस उपन्यास में दलित समाज की सुंदर लड़कियों को देवदासी के रूप में चुना जाता उसके माँ-बाप को बताया जाता है कि देवी माँ की इच्छा के अनुरूप तुम्हारी लड़की देवदासी बनेगी हिंदू धर्म के अनुसार तुम्हारा अच्छा हो जाएगा यह बड़ा सौभाग्य है, ऐसा अज्ञानी पिता को कहा जाता है और यह लड़की देवदानी जब बनती है, तो उसका यौन शोषण किया जाता है जब वह शिकायत करती है, तो उसे कहा जाता है- "तू देवदासी है और देवदासी को शिकायत करने का अधिकार नहीं होता। वरना देवता कुंपित हो जाएंगे। स्वयं चलम्मादेवी तुझसे नाराज हो जाएंगी। तेरा सत्यानाश हो जाएगा। तू कहीं की भी नहीं रहेगी।"[9] दलित स्त्रियों के साथ व्यभिचार यहाँ किया जाता है। इस तरह से इक्कीसवीं सदी के उपन्यासों में अभिव्यक्त सामाजिक समस्याएँ दिखाई देती है।

दलित साहित्य समता, ममता, बंधुत्व की भावना को बढ़ाने वाला साहित्य है। भारतीय समाज में परम्परागत रूप में आने वाली सभी सम्प्रदायों को नकारते हुए नए सम्प्रदायों की घोषणा करने वाला है पुरानी पंथियों की जगह नयी पंथियों का सृजन करने वाला है। जिन लोगों को हजारों से गूँगा और मूक बनाकर रखा है। इन लोगों की आशाएं -आकांक्षाएँ तथा अधिकारों को लेकर पुकार करने के लिए दतिल साहित्य आज चौराहे पर खड़ा है।

संदर्भ-

1. ज्योत्सना शर्मा, शिवानी का हिन्दी साहित्य : सामाजिक परिप्रेक्ष्य में, पृ. 165
2. विद्यासागर नौटिया, स्वर्ग द् द् दा ! पाणि पाणि, पृ. 26
3. उमराव सिंह जाटव, थमेगा नहीं विद्रोह, पृ. 194
4. स्वर्ग द् द् दा! पाणि पाणि, पृ. 693
5. वही, पृ. 95
6. रूपनारायण सोनकर, सूअरदान, पृ. 25
7. वही, पृ. 69
8. थमेगा नहीं विद्रोह, पृ. 185
9. मोहनदास नैमिशराय, आज बाजार बंद है, पृ. 91

हिंदी विभाग, राधाबाई काले महिला महाविद्यालय, जिला-अहमदनगर (महा.)

Scanned with OKEN Scanner